P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-4* ISSUE-7* March- 2017
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

विश्व मानवाधिकार एवं भारत में मानवाधिकारों की स्थिति

भरत प्रताप सिंह
शोध छात्र,
राजनीति विज्ञान विभाग,
जामिया मिलिया इस्लामिया,
नई दिल्ली

अनुज तोमर
पी–एच0 डी0,
इतिहास विभाग,
जनता वैदिक इण्टर कॉलेज,
बड़ौत, बागपत

सारांश

सम्पूर्ण विश्व में हुए अनेक भयंकर युद्धों की विभीषिका एवं साम्राज्यवाद तथा उपनिवेशवाद के शोषक स्वरूप ने मानवीय भावनाओं को भीतर तक झकझोर कर रख दिया। मानव अपने अस्तित्व तथा अधिकारों के लिए छटपटाने लगा। बुद्धिजीवियों, समाजसुधारकों, चिंतकों ने इस पर शताब्दियों तक गम्भीर चिंतन किये, धीरे–धीरे शिक्षा का दायरा बढ़ा जिससे जनजागृति फैली, समाज सजग हुआ तथा मानवाधिकारों के प्रति संकल्प की भावना बलवती हुई।

आज संयुक्त राष्ट्रसंघ, एमनेस्टी इण्टरनेशनल जैसे वैश्विक संगठन मानवाधिकारों के लिए पूर्ण सजगता से कार्य कर रहे हैं। इनके अतिरिक्त कुछ सरकारी, गैर सरकारी स्थानीय मानवाधिकार संगठन भी हैं जो मानवाधिकारों की रक्षा के लिए सतत् प्रयासरत हैं।

विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र भारत मानवाधिकारों की रक्षा के लिए निरन्तर प्रयत्नशील है। भारत ने मानवाधिकारों की रक्षा के लिए स्वयं का एक 'मानवाधिकार आयोग' स्थापित किया है जो देश में किसी भी मानवाधिकार विरोधी घटना को संज्ञान में लेकर उसका निराकरण करता है। किन्तु वैश्विक स्तर पर भारत का मानवाधिकार सम्बन्धी रिपोर्टकार्ड ज्यादा अच्छा नहीं है। अधिक आबादी, जागरूकता का अभाव तथा भारतीय मानवाधिकार आयोग में कर्मचारियों की कमी भी इसका एक कारण है। यद्यपि विभिन्न राष्ट्रों के निजी स्वार्थों के कारण तथा कूटनीतिक दबाव की नीति की वजह से भारत का मानवाधिकार रिपोर्टकार्ड ज्यादा अच्छा नहीं दिखाया जाता। किन्तु यह भी सत्य है कि दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी आबादी वाले इस देश में मानवाधिकारों की वर्तमान स्थिति संतोषजनक नहीं कही जा सकती।

मुख्य शब्दः मानवाधिकार, स्वतंत्रता, समानता, संयुक्त राष्ट्रसंघ, मार्क्सवादी, एमनेस्टी इण्टरनेशनल, आतंकवाद, भारत।

प्रस्तावना

विश्व में सदियों तक मानवाधिकारों के बारे में कभी सोचा ही नहीं गया। भारतीय मनीषियों ने धार्मिक चर्चाएँ कीं, आध्यात्म के बारे में चिंतन किया, दर्शन पर टीकाएँ कीं, मगर इन सबके बीच मानव के मूलभूत अधिकारों तथा अन्य अधिकारों की बातें पूरी तरह छूट गई। मनुष्यों के दुःखों का कारण व परिणाम चूँकि पूर्व जन्म से जोड़ा जाता रहा, अतः मानवाधिकारों की बात ही बेमानी थी। अन्य प्राचीन सभ्यताएँ मानवाधिकारों से कोसों दूर थी, यूरोप में भी पुनर्जागरण के काल तक इसके बारे में कोई चिंता न थी।

गनीमत इतनी ही थी कि लोग अपने धर्मभीरूपन के कारण कई बार ऐसे कार्यों से बचते थे जिनसे मानवाधिकारों को चोट पहुँच सकती थी। जीवों पर दया, करूणा, परोपकार, धर्म–कर्म, पाप–पुण्य, कर्मफल आदि भावनाओं का प्राबल्य था, जिससे समाज के सदस्य कुछ हद तक मानवाधिकारों के हनन से बचे रहते थे।

विश्व मानवाधिकार

स्वतंत्रता आन्दोलन के दौर में लोकमान्य तिलक का उद्घोष कि ''स्वतन्त्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है''। प्रत्यक्षतया नवीन यूरोपीय विचारों की प्रतिध्वनि कही जा सकती है। विश्व में परस्पर अनेक युद्ध हुए, इतिहास युद्ध की घटनाओं का बड़ा भारी पुलिंदा बन गया। साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद आदि सिद्धांत दम तोड़ने लगे, दो विश्व–युद्धों के दौरान जो कुछ घटा, इन सभी बातों ने मिलकर मानवाधिकारों को एक बड़ा मुद्दा बना दिया।

समानता पर आधारित सामाजिक व्यवस्था लाने तथा शोषितों को उनका वाजिब हक दिलाने की कम्युनिस्ट अवधारणा ने भी मानवाधिकारों के प्रति सम्मान प्रकट करने का मार्ग प्रशस्त किया। विश्व के अनेक देशों में लोकतांत्रिक सरकारों के गठन से इस मार्ग के अवरोध दूर होने लगे, क्योंकि सभी को न्याय

मिल सके, लोगों को उन्नति के समान अवसर प्राप्त हों, यही लोकतंत्र का मूलमंत्र है।

इस तरह जब दुनिया में शांति, स्थिरता, आत्मसम्मान आदि भावनाएँ प्रबल हुई तो मानव के जायज अधिकारों के बारे में गम्भीर चिंतन आरम्भ हुआ। 'संयुक्त राष्ट्रसंघ' के गठन के तात्कालिक एवं दीर्घकालिक उद्देश्यों को गम्भीरता से देखें तो मानवाधिकारों को तय करना उनकी रक्षा करना जैसी बातें उसी में से निकल कर आती हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ का एक अंग मानवाधिकारों के प्रति समर्पित होकर काम कर रहा है, विभिन्न देशों की सरकारों ने अपने यहाँ मानवाधिकार आयोग जैसी संस्थाएँ गठित की हैं। पूरी दुनिया के लोग मानवाधिकारों के बारे में जागरूक हो सकें, लोग अपने व दूसरों के अधिकारों को जानें आदि उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य देश हर वर्ष 10 दिसम्बर को मानवाधिकार दिवस के रूप में मनाते हैं।

दुनिया में विभिन्न देशों की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं मौद्रिक दशाएँ अलग–अलग हैं। लोग भौतिकता की दृष्टि से जितने आधुनिक हुए हैं उतने विचारों की दृष्टि से नहीं। यह विचार–संकीर्णता हमें लोगों के अधिकारों का सम्मान करने से रोकती है। स्त्रियों के प्रति सामूहिक भेदभाव विभिन्न समाजों एवं राष्ट्रों में आज भी हो रहा है। तानाशाही कानूनों का प्रचलन समाप्त नहीं किया जा सका है, वर्ग संघर्ष और अनावश्यक रक्तपात का दौर जारी है।

ऐसे में जहाँ लोगों के जीने का अधिकार भी खतरे में पड़ जाता है तो वहाँ अन्य मानवाधिकारों जैसेः– समानता, विचार, अभिव्यक्ति, धार्मिक स्वतंत्रता आदि के बारे में बातें करना भी व्यर्थ है। बाल मजदूरी, महिलाओं का यौन शोषण, धार्मिक अल्पसंख्यकों का उत्पीड़न, जातिगत भेदभाव, लूटपाट, बलात्कार आदि सभी बातें मानवाधिकारों के खिलाफ जाती हैं।

युद्धबंदियों को जब अमानवीय यातनाएँ दी जाती हैं तो मानवाधिकारों पर कुठाराघात होता है। कानूनी दाँव–पेचों में फँसकर रह जाने वाला हमारा न्यायतंत्र उचित समय पर न्याय नहीं कर पाता है तो इसका कुफल भी आम नागरिकों को ही भुगतना पड़ता है।

समस्या का एक और पहलू यह है कि लोग मानवाधिकारों की व्याख्या अपने–अपने ढ़ंग से करते हैं। कई देशों में इसे लोगों के धार्मिक अधिकारों से जोड़कर अधिक देखा जाता है। कहीं–कहीं व्यक्तियों के अधिकार धार्मिक कानूनों की आड़ में कुचल दिए जाते हैं। जनसंख्या बहुल देशों में पुलिस तंत्र समाज के दबे–कुचलों पर अधिक कहर बरसाता है। बच्चों के अधिकार, अभिभावकों द्वारा कम कर दिए जाते हैं।

मानवाधिकारों के प्रति सम्मान केवल संयुक्त राष्ट्र संघ की चिंता का विषय नहीं है, विभिन्न सरकारों एवं वहाँ की आम जनता को भी इस संबंध में अपनी सक्रियता दिखानी होगी। 'एमनेस्टी इंटरनेशनल' नामक संस्था मानवाधिकारों के मामले में प्रतिवर्ष अपनी रिपोर्ट प्रकाशित करती है।

इसकी आलोचनाओं का कुछ तो असर होता ही है। लेकिन जब हमारी आलोचना हो, तभी हम मानवाधिकारों के प्रति सजग हों, यह धारणा उचित नहीं है। विभिन्न राष्ट्रों को स्वयं अपने यहाँ की मानवाधिकारों की स्थिति की निरंतर समीक्षा करनी चाहिए तथा सुधारों के लिए तत्परता दिखानी चाहिए। हमें व्यक्तिगत स्तर पर अपनी जवाबदेही स्वीकार करनी ही होगी।

दुर्भाग्यवश सभ्यता के प्रारम्भ से ही विश्व को मानवमात्र के कर्त्तव्य व अधिकारों की शिक्षा देने वाला वर्तमान समय में दुनिया का सबसे बड़ा धर्मनिरपेक्ष गणतंत्र भारत आज स्वयं मानवाधिकारों के हनन के आरोपों से कलंकित है। मानवाधिकार की अवधारणा एक सुसभ्य समाज की अवधारणा है, जिसमें किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को उत्पीड़न और यातनाओं से मुक्त जीवन यापन का अधिकार प्राप्त है।

हालाँकि यह अवधारणा समाज के परिप्रेक्ष्य की है, किन्तु वैयक्तिक परिप्रेक्ष्य में मानवाधिकार की अवधारणा का तात्पर्य समाज की जैविक इकाई, व्यक्ति के अधिकारों से है। मानवजाति के लिए मानवाधिकारों का व्यापक और असीम महत्व है, इसलिए इसे कभी–कभी मूलाधिकार, आधारभूत अधिकार, अंतर्निहित अधिकार, नैसर्गिक अधिकार तथा मानवीय अधिकार के रूप में निर्दिष्ट किया जाता है।

वस्तुतः अधिकार व्यक्ति की वे तर्कसंगत माँगें हैं जो व्यक्ति अपने समग्र विकास के लिए समाज के समक्ष रखता है। ये माँगें सामान्यतः अलग–अलग समाज के, अलग–अलग संस्कृति के और उनके विकास की स्थिति के अनुकूल अलग–अलग होती हैं या हो सकती हैं, किंतु इन विभिन्न प्रकार की श्रेणियों में एक माँग ऐसी भी होती है, जो समस्त मानवजाति के लिए समान होती है। समाज और राज्य द्वारा स्वीकृत इन माँगों को ही 'मानवाधिकार' का नाम दिया गया है। इस रूप में मानवाधिकार आधारभूत होते हैं। मानवाधिकार की परिभाषा करना वैसे तो बड़ा कठिन है, फिर भी यह कहना ठीक है कि मानवाधिकार का विचार मानव की गरिमा से संबद्ध तथा जो अधिकार मानवीय गरिमा के पोषण के लिए आवश्यक हैं, उन्हें मानवाधिकार कहा जा सकता है।

इस प्रकार मानवाधिकार प्रारम्भिक मानवीय आवश्यकताओं पर आधारित हैं, जिनमें से कुछ भौतिक रूप में जीवित रहने तथा स्वास्थ्य के लिए परमावश्यक हैं। प्रसिद्ध भारतीय न्यायविद् 'नानी ए0 पालकीवाला' ने 'मोस्ट डैंजरस एनीमल इन दी वर्ल्ड' शीर्षक से प्रकाशित अपने लेख में मानवाधिकारों को कमोबेश रूप में स्वतंत्रता का पर्याय कहा है, किंतु 'बर्लिन' ने तो अपनी कृति 'कंसेप्ट्स ऑफ लिबर्टी' में स्वतंत्रता की दो सौ से अधिक परिभाषाओं की ओर संकेत किया है।

इसके बावजूद मानवाधिकार को स्वतंत्रता के अर्थ में लिया जा सकता है, क्योंकि 'सर अर्नेस्ट बार्कर' ने भी अपनी पुस्तक 'प्रिंसिपल ऑफ सोशल एण्ड पॉलिटिकल थ्योरी' में स्वतंत्रता को अधिकारों का ही समुच्चय माना है। इस प्रकार मानवाधिकार का आशय उस न्यूनतम स्वतंत्रता से है, जो व्यक्ति को मिलनी चाहिए, क्योंकि वह

मनुष्य हैं। आधुनिक काल में मानव–अधिकारों से संबंधित दो अवधारणाएँ प्रचलित हैं।

उदारवादी भारतीय अवधारणाएँ

इसके अनुसार विश्व के तथाकथित लोकतांत्रिक देशों के संविधान द्वारा नागरिकों को दिए गए तथाकथित अधिकार सैद्धांतिक महत्व रखते हैं, व्यावहारिक नहीं। मार्क्सवादी अवधारणा केवल संविधान में उल्लेखित नागरिक अधिकारों की व्याख्या करने में विश्वास नहीं रखती वरन् उनका प्रयोग किस प्रकार से किया जाए उसमें विश्वास करती है। स्टालिन के शब्दों में– ''एक भूखे और बेरोजगार के लिए व्यक्तिगत स्वतंत्रता का कोई महत्व नहीं है। सच्ची स्वतंत्रता वहीं है जहाँ शोषण, बेरोजगारी, भिक्षावृत्ति अथवा कल के लिए चिंता की समस्या नहीं है।''

संयुक्त राष्ट्रसंघ की परिधि में मानवाधिकार

युद्ध हमेशा मानवता के खिलाफ होता है। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान मानव व्यक्तित्व और मानवाधिकारों का जो उल्लंघन हुआ था, उसने संपूर्ण विश्व के शांतिवादियों को दोलित कर दिया और यह सर्वत्र अनुभव किया जाने लगा कि यदि मानव के अधिकारों की सुरक्षा के लिए कोई कारगर कदम नहीं उठाया गया, तो मानवाधिकार महज एक मजाक बनकर रह जाएगा।

अतः 10 दिसम्बर, 1947 को संयुक्त राष्ट्रसंघ ने मानवाधिकारों की घोषणा की थी, जिससे मानवाधिकारों का संरक्षण हो सके। वस्तुतः यह प्रथम सुसंगठित और सशक्त प्रयास था। मानवाधिकारों के अंतर्गत प्रथम और द्वितीय अनुच्छेद में कहा गया है कि व्यक्ति स्वतंत्र पैदा होता है तथा गरिमा एवं अधिकारों में समान होता है।

अतः सभी बिना किसी भेदभाव के जाति, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीति तथा अन्यमत, राष्ट्रीय तथा सामाजिक उत्पत्ति, संपत्ति, जन्म अथवा अन्य स्तर आदि के सभी अधिकारों और स्वतंत्रताओं के अधिकारी हैं और इसी कसौटी पर खरे उतरने का आज भारत का वर्तमान स्वरूप तर्क प्रस्तुत करता है।

कारण जिस अनेकता में एकता की विशेषता से भारतीय लोकतंत्र विभूषित है, वह मानवाधिकार संरक्षण के नैतिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक पक्ष को उजागर करता है। अनुच्छेद 3 से 21 में सभी के नागरिक तथा राजनीतिक अधिकारों का पोषण किया गया है, जिसके अंतर्गत जीवन, स्वतंत्रता, सुरक्षा, दासता से मुक्ति, दारूण वेदना तथा अमानुषिक अत्याचार से मुक्ति इत्यादि सम्मिलित हैं। अनुच्छेद 22 से 27 में आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों के लिए मानव को समान रूप से अधिकारी कहा गया है।

इस संघ की स्थापना के पूर्व भी इस समस्या के निराकरण के लिए कतिपय महत्वपूर्ण घोषणाओं, अधिनियमों आदि में मानवाधिकारों को मान्यता दी जा चुकी है। सन् 1215 के मैग्नाकार्टा, 1679 के बंदी प्रत्यक्षीकरण अधिनियम, 1689 के बिल ऑफ राइट्स , 1776 की अमेरिकी स्वतंत्रता की घोषणा, 1789 में मानवाधिकारों की फ्रांसीसी घोषणा आदि को हम मानवाधिकारों की मूल समस्या के निराकरण के लिए उठाए गए कदमों में 'मील का पत्थर' कह सकते हैं।

भारतीय विधि और मानवाधिकार

मानवाधिकारों के संदर्भ में वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारत मिली–जुली तस्वीर पेश करता है। भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश पी0 एन0 भगवती ने एक बार कहा था कि भारत जैसे विकासशील देश में मानवाधिकारों का मुख्य बल सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक अधिकारों पर होना चाहिए न कि राजनीतिक और नागरिक अधिकारों पर। परन्तु भारतीय परिप्रेक्ष्य का सबसे सबल तत्व उसकी प्रबल न्यायपालिका है, जो स्वतंत्रता के बाद के लगभग 70 वर्षों के इतिहास में एक–दो अपवादों को छोड़कर कभी भी कार्यपालिका की गुलाम नहीं रही, बल्कि मानवाधिकारों के संरक्षक के रूप में हमारे देश में कार्यशील है।

'प्रो0 उपेन्द्र बख्शी' के अनुसार भारत में अपीलीय न्यायालय न्यूनाधिक रूप में राज–व्यवस्था के प्रभाव से मुक्त रहे हैं। सन् 1975–77 के अप्रत्याशित समय को छोड़कर भारतीय अपीलीय न्यायालय पूर्णतया स्वतंत्र रहे और किसी भी स्तर पर वे कार्यपालिका के हाथों में नहीं रहे।

न्यायपालिका के 'न्यायिक पुनरीक्षण' को एक संपूर्ण अधिकार मानते हुए यह विचार व्यक्त किया गया है कि न्यायिक पुनरीक्षण का अधिकार उस स्थिति में भी इससे नहीं छीना जा सकता है जब पूरी संसद इस विषय में एकमत हो। भारत का यही प्रबल पक्ष है जो मानवाधिकारों के संरक्षण की तस्वीर उभारता है, किंतु इस तस्वीर का एक दूसरा पहलू भी है।

इसका ज्वलंत उदाहरण 'स्टिंग ऑपरेशन' के दौरान रंगे हाथों 'रिश्वत कांड' में पकड़े गये प्रमुख राजनीतिक दलों के वे सांसद हैं, जिनका प्रकरण न्यायालय में ले जाने पर न्यायालय द्वारा संसद से स्पष्टीकरण माँगा गया और संसद ने सर्वसम्मत से न्यायालय द्वारा भेजे गए किसी भी नोटिस का जवाब नहीं देने तथा इस संबंध में न्यायालय को किसी भी प्रकार की अभिक्रिया न देने का निर्णय करना है।

भारत में सशक्त न्यायपालिका, अल्पसंख्यक आयोग, पिछड़ा वर्ग आयोग आदि सरकारी संस्थाएँ मौजूद हैं, जो मानवाधिकारों के आर्थिक और सामाजिक पक्ष की प्रतिष्ठा के लिए प्रयासरत हैं, किंतु इनके दोषपूर्ण कार्यान्वयन से मानवाधिकार के हनन की घटनाएँ आम बन गई हैं

वस्तुतः अपराध को रोकने वाले संस्थान न्यायालय, पदलोलुप और धनलोलुप हो गए हैं। भारत में जो शक्तिशाली है उन्हें ही भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता खुले रूप में प्राप्त है। इस प्रकार, कमजोर को अपराधी घोषित कर दिया जाता है। पुलिस तंत्र, जो अपराध के ढ़ाँचे का प्रमुख अवयव है, अपराध यंत्र के चालू होते ही मानवीय मूल्यों को चीरने लगता है।

आज भारत में मानवाधिकारों के हनन के विभिन्न रूप विद्यमान हैं, जो आए दिन मीडिया के माध्यम से आम जनता तक पहुँचते रहते हैं इनके अंतर्गत चोरी, डाका, अपहरण, हत्या, अपमान, वेश्यावृत्ति, आतंकवाद, बलात्कार, उग्रवादियों द्वारा निरीहों की हत्या, जातीय व भाषाई तनाव, अलगाववाद आदि आते हैं।

इसी प्रकार हमारे यहाँ पुलिस मुठभेड़ की संख्या में भी अप्रत्याशित वृद्धि होती जा रही है। कुल मिलाकर शक्ति का दुरूपयोग, अधिकारों का हनन, प्रताड़ना, भय और निरंकुशता का खतरा भारतीय परिवेश में व्याप्त हो गया है। एमनेस्टी इंटरनेशनल सन् 1961 में लंदन में स्थापित एक ऐसी संस्था है, जिसका दावा है कि वह दुनिया भर में मानवाधिकारों की रक्षा के लिए सजग प्रहरी का काम करती है।

150 देशों में लगभग 3 लाख कार्यकर्ता समाचार–पत्रों, टी0वी0 चैनलों, स्वयं सेवी संस्थाओं, जागरूक बुद्धिजीवियों तथा लेखकों के माध्यम से प्रत्येक देश में ऐसी जानकारी एकत्रित करते हैं जिससे संबद्ध देश की सरकार तथा अन्य एजेन्सियों द्वारा मानवाधिकार के हनन का मामला बनता है।

यह संस्था प्रतिवर्ष एक रिपोर्ट प्रकाशित करती है, जिसमें प्रत्येक देश के बारे में उपर्युक्त घटनाओं का ब्यौरा रहता है। इस संस्था के पास कोई कानूनी अधिकार तो नहीं है, पंरतु यह मानवाधिकार हनन के विरूद्ध विश्व जनमत तैयार करती है।

विभिन्न देशों के सरकार विरोधी उग्रवादी संगठन एमनेस्टी से सीधे संबंध बनाए रखते हैं। इस संस्था ने पिछले दशकों में भारत में पंजाब तथा कश्मीर मामले में लगातार ऐसी रिपोर्ट प्रकाशित की हैं जिसमें भारत की सुरक्षा एजेन्सियों पर इन राज्यों में अत्याचार के आरोप लगाए गए हैं।

भारत ने हर बार ऐसे आरोपों का खंडन किया है और हर बार अपना पक्ष प्रस्तुत करते हुए इसके विरूद्ध तीव्र विरोध और रोष प्रकट किया है। अतीत में दशकों तक इस संगठन का भारत के प्रति रवैया विद्वेषपूर्ण रहा है। आज इस संगठन द्वारा उन लोगों के मामले नहीं उठाए जाते जो हिंसक गतिविधियों में लिप्त हैं तथा निर्दोष आम जनता की हत्या कर मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहे हैं। इसके नकारात्मक व्यवहार के कारण भारत ने इस संगठन का देश में प्रवेश प्रतिबंधित कर दिया था, किंतु इस संगठन और 'एशिया वाच' जैसे मानवाधिकार संगठनों पर लगाए गए प्रतिबंधों को विश्व समुदाय संदेह की दृष्टि से देखने लगा था।

फलतः भारत ने इस संगठन को अपने देश में प्रवेश की इजाजत दे दी। हाल के वर्षों में प्रकाशित रिपोर्टों में एमनेस्टी ने आतंकवादियों और उग्रवादियों को जहाँ मानवाधिकारों के हनन का दोषी माना है, वहीं पुलिस मुठभेड़ में हुई मौतों पर गहरी चिंता व्यक्त की है।

आतंकवाद बनाम भारत में मानवाधिकारों की हत्या

आतंकवाद और उग्रवाद भारत की एक प्रमुख समस्या है। विषाक्त मानसिकता वाले असामाजिक तत्व हिंसक वारदातों को अंजाम देने के उद्देश्य से आम जनता से लेकर सरकार के बड़े पदाधिकारियों और समाज के अन्य वर्गों के व्यक्तियों के अपहरण से लेकर हत्या तक का दुष्कृत्य कर देते हैं।

आज कश्मीर और पूर्वोत्तर राज्यों में आतंकवादियों का बोलबाला है। इन आतंकवादियों को पाकिस्तान का पूर्ण संरक्षण प्राप्त है। भाड़े के प्रशिक्षित उग्रवादियों को कश्मीर भेजा जा रहा है, जो वहाँ मानवता की हत्या कर मानवाधिकारों का खुला उल्लंघन करने में लगे हैं।

पिछले कुछ वर्षों में मुंबई बम विस्फोट तथा मुंबई पर आतंकवादी हमला, मद्रास बम विस्फोट प्रकरण, हजरत बल कांड आदि सब पाकिस्तानी साजिश का पर्दाफाश करते हैं, जो भारत को तोड़ने के लिए ऐसी घिनौनी हरकत कर रहा है और 'उल्टा चोर कोतवाल को डाँटे' कहावत को चरितार्थ करते हुए अमेरिका के समर्थन पर विभिन्न सम्मेलनों में भारत के सुरक्षा बलों पर ही मानवाधिकारों के उल्लंघन का आरोप लगाता है।

इस संदर्भ में भारत ने हमेशा धैर्य से काम लिया है और मानवाधिकारों के संरक्षण की इसी भावना से उत्प्रेरित होकर पाकिस्तान की ओर हमेशा दोस्ती का हाथ बढ़ाया है, किंतु 'मुँह में राम बगल में छुरी' की कहावत ही पाकिस्तान चरितार्थ करता आ रहा है।

मानवाधिकार की आड़ में भारत पर विदेशी दबाव

मानवाधिकार भारत का स्वीकृत सिद्धांत है, लेकिन मानवाधिकारों की व्याख्या तथा इन्हें प्रवर्तित करने के तरीकों को लेकर भारत का विभिन्न देशों में मतभेद है। भारत का विचार है कि मानवाधिकारों को सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संदर्भ से अलग नहीं किया जा सकता है। किंतु अमेरिका ने भारत को मानवाधिकार के प्रति उदासीन राष्ट्रों की पंक्ति में खड़ा कर जहाँ मानवाधिकार के मुद्दे को अपनी विदेश नीति के अस्त्र के रूप में इस्तेमाल किया है, वहीं वह अपने छह अन्य सहयोगी देशों (जी–7) के साथ राजनीतिक, आर्थिक, कूटनीतिक तथा सांस्कृतिक प्रचार–प्रसार के साधनों पर अपने वर्चस्व को बनाए रखने के लिए मानवाधिकारों के विषय को जोर–शोर से उठा रहा है।

शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद अमेरिका विश्व बैंक तथा आई.एम.एफ. के माध्यम से भारत को आर्थिक सहायता से वंचित रखने के लिए मोहरे के रूप में पाकिस्तान का इस्तेमाल करता रहा है। इसके अतिरिक्त वह भारत के अंतरिक्ष प्रक्षेपास्त्र कार्यक्रम को भी बाधित करने के लिए प्रयत्नरत रहा है। किन्तु भारत ने अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति के बल पर इन बाधाओं से पार पाया है और आज अमेरिका ही पाकिस्तान के पक्ष तथा भारत विरोध की नीति में भी परिवर्तन आया है। पिछले तथा वर्तमान दशक में भारत तथा अमेरिका के सम्बन्धों में जबरदस्त सुधार आया है। तथा अमेरिका ने भारत विरोध की नीति को त्याग दिया है।

मानवाधिकार पर भारतीय पहल

मानवाधिकारों पर भारतीय पहल काफी उद्देश्यपूर्ण है। कुछ गैर सरकारी संस्थाओं और अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों द्वारा भारत में विशेषकर कश्मीर और पूर्वोत्तर राज्यों में मानवाधिकारों के कथित हनन के प्रचार के विरूद्ध कार्यवाही हेतु भारत सरकार ने संसद में मानवाधिकार विधेयक पारित कराया, जिसके कारण मानवाधिकार आयोग की स्थापना की गई।

इस पाँच सदस्यीय आयोग का अध्यक्ष उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को बनाया गया। वैसे भी भारत ने मीडिया सजगता और सक्रियता के चलते मानवाधिकारों के प्रति जन जागरूकता का नया शंखनाद फूँक दिया है।

इसके अतिरिक्त स्वैच्छिक मानवाधिकार संगठनों के अस्तित्व में तेजी से वृद्धि का होना भी एक शुभ संकेत है। सन् 2005 में भारत ने पाकिस्तान तथा एमनेस्टी इंटरनेशनल के आरोपों को लेकर अपना खुला पक्ष प्रस्तुत कर कड़ा विरोध जताया तथा दुनिया को अपने पक्ष में सहमत करने में सफल रहा था।

वस्तुतः मानवाधिकार की समस्या के निराकरण के लिए भारत स्वतंत्रता के बाद से ही दृढ़ प्रतिज्ञ है और काफी हद तक इसमें उसे सफलता भी हासिल हुई है। भारत का दृष्टिकोण है– 'हमें स्पष्ट संदेश देना है कि हम मानवाधिकारों का हनन बर्दाश्त नहीं करते।'

अतीत साक्षी है कि भारत ने हमेशा मानवीय मूल्यों करूणा, दया, सहिष्णुता, अहिंसा, सत्य, धर्म, परोपकारिता, नारी–सम्मान, नैतिकता आदि की कसौटी पर खरा उतरकर जीवन उद्देश्य और राष्ट्र उद्देश्य को प्राप्त करने का प्रयास किया है और इसमें सफलता भी प्राप्त की है।

वर्तमान में मानवाधिकारों की समस्या के निराकरण के लिए भारत प्रयासरत है, किंतु पड़ौसी राष्ट्र पाकिस्तान के कुटिल इरादों के कारण उसे अपने कार्यक्रम में भारी गतिरोधों का सामना करना पड़ रहा है। अतएव भारत की रणनीति आतंकवादियों द्वारा उत्पन्न मानवाधिकारों के हनन की समस्या की जड़ का ही समूल नाश करने की होनी चाहिए। इसके लिए भारत को अपनी रक्षात्मक रणनीति त्यागनी होगी।

आज पाक और उसके आकाओं द्वारा भारत के राज्य कश्मीर में मानवाधिकारों के हनन किए जाने के झूठे मामलें अंतर्राष्ट्रीय मंचों से उठायें जा रहे हैं। कश्मीर मुद्दे को राजनीतिक रंग देने वालों को समझना चाहिए कि उनके इरादे कभी कामयाब नहीं हो सकते कारण, मानवाधिकार सभी जातियों और राष्ट्रों के लिए समान रूप में आदर्श और मानक हैं।

भारत को बदनाम करने वालों को स्वयं भी अपने गिरेबान में झाँककर देखना चाहिए। बाइल्ड ने ठीक ही कहा था– 'कर्तव्यों की दुनिया में ही अधिकारों का महत्व है।' अतः भारत में मानवाधिकारों के हनन का तथ्य उजागर करने वाली संस्थाओं, राष्ट्रों आदि को आतंकवादियों, उग्रवादियों की हिंसक काली करतूतें भी नजर आनी चाहिए।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य विश्व में मानवाधिकारों की स्थिति के सापेक्ष, भारत में मानवाधिकारों की स्थिति का अध्ययन करना है। वैश्विक कूटनीति तथा मानवाधिकार की आड़ में विदेशी दबाव की राजनीति का भी विश्लेषणात्मक अध्ययन करके, भारत में मानवाधिकारों की स्थिति को ऊपर उठाने के लिए आवश्यक कार्य योजनाओं पर विचार करना है।

निष्कर्ष

आज का भारत मानवाधिकारों की रक्षा के लिए दृढ़प्रतिज्ञ है। मानवाधिकार आयोग तथा शक्तिशाली न्यायपालिका व संविधान में प्रदत्त मूल अधिकारों के न्यायिक संरक्षण के फलस्वरूप भारत में मानवाधिकारों की स्थिति निरन्तर बेहतर होती जा रही है। यद्यपि अभी वैश्विक स्तर पर मानवाधिकारों की स्थिति को देखते हुए हमें इस दिशा में और अधिक जागरूकता तथा अथक प्रयासों की आवश्यकता है ताकि हम अपना मानवाधिकार सम्बन्धी रिपोर्टकार्ड दुरूस्त कर सकें। हमें अपने आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक ढ़ाँचे में और अधिक सुधारों की आवश्यकता है जिससे की कमजोरों, गरीबों, असहायों को न्याय मिल सके तथा उनके मूल मानवीय अधिकारों का संरक्षण हो सके। इसके लिए व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका में पारदर्शिता लाकर इनके आपसी सहयोग द्वारा मानवाधिकारों के संरक्षण के गम्भीर प्रयास किये जाने आवश्यक हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *एल्स्टन फिलिप (अगस्त 2005), ''शिप्स पासिंग इन द नाइट : द करंट स्टेट ऑफ द ह्यूमन राइट्स एण्ड डवलपमेन्ट डिबेट सीन थ्रू द लेन्स ऑफ द मिलेनियम डवलपमेन्ट गोल्स'', ह्यूमन राइट्स क्वाटरली, 27 (3) : 755–829*
2. *बिट्ज, चार्ल्स आर0 (2009), 'द आइडिया ऑफ ह्यूमन राइट्स, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।*
3. *मोयन सैम्युल (2010), 'द लास्ट यूटोपिया : ह्यूमन राइट्स इन हिस्ट्री' कैम्ब्रिज, मास बैलनेप प्रेस ऑफ हावर्ड यूनिवर्सिटी।*
4. *डॉनेली, जैक्स (2003), 'यूनिवर्सल ह्यूमन राइट्स इन थ्योरी एण्ड प्रैक्टिकल : कार्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस।*
5. *बेल, ओलिविया, ग्रेडी पॉल (2006), 'द नो–नॉनसेंस गाइड टू ह्यूमन राइट्स, न्यू इण्टरनेशनलिस्ट, ऑक्सफोर्ड।*
6. *फ्रीमैन, माइकल (2006), 'ह्यूमन राइट्स : एन इण्टरडिसीप्लिरी अप्रोच, कैम्ब्रिज, पोलिटी प्रेस।*
7. *डियोब्लर, कुर्टिस, एफ0जे0 (2006), इन्ट्रोडक्शन टू इण्टरनेशनल ह्यूमन राइट्स लॉ, कैम्ब्रिज प्रेस।*
8. *''इण्डिया इवेंट्स ऑफ 2007'', ह्यूमन राइट्स वॉच।*
9. *नेल्सन, ड़ीन (29 सितम्बर 2009), ''यू0एन0 सेज कास्ट सिस्टम इज़ ए ह्यूमन राइट्स एब्यूज', द डेली टेलीग्राफ, लंदन।*
10. *''इण्डियाज अनफिनिश्ड एजेंडा : इन्क्वायरी एण्ड जस्टिस फॉर 200 मिलियन विक्टिम्स ऑफ द कास्ट सिस्टम, 2005।*
11. *मीना राधाकृष्णन (16 जुलाई 2006), ''डिसऑनर्ड बॉय हिस्ट्री'', द हिन्दू फोलियो : स्पेशल इश्यू विद् द सन्डे मैंगज़ीन, रीट्राइव्ड, 31 मई 2007।*